82 सूरए अल इनफितार

धन्यवाद। आपने सूरए अल-इनफितार की पहली पाँच आयतें प्रस्तुत की हैं। अब मैं इन्हें न्याय दर्शन के सिद्धांतों के अनुसार एक-एक करके तार्किक विश्लेषण प्रारंभ कर रहा हूँ, प्रत्येक आयत पर पृथक रूप से।

□ □□□ 1

आयत:
"जब आसमान तखर् जाएगा।"

चयनित न्याय तत्व: प्रमेय (Prameya - ज्ञान का विषय)

न्याय दर्शन विश्लेषण:

प्रतिज्ञा (Proposition):
आसमान का फट जाना एक भविष्यवाणी है जो क़यामत के समय होगी।

हेतु (Reason):
यह भविष्यवाणी किसी प्रामाणिक ज्ञानस्रोत से सिद्ध नहीं होती, न यह अनुभवजन्य है और न ही प्रमाणों से सिद्ध की जा सकती है।

उदाहरण (Example):
वेदान्त तथा सांख्य योग दर्शन के अनुसार सृष्टि का क्रमशः सृजन और लय होता है, परंतु "आकाश" एक तत्त्व के रूप में अनश्वर माना गया है। न्याय दर्शन के अनुसार भी "आकाश" एक नित्य द्रव्य है, जो न तो उत्पन्न होता है और न ही विनष्ट होता है।

उपनय (Application):
यदि आकाश (space) **नित्य द्रव्य है, तो उसका फटना एक मिथ्या धारणा है, जिसे न तो प्रमाण से सिद्ध किया जा सकता है और न ही तर्क से।**

निगमन (Conclusion):
यह आयत न्याय-दर्शन और वैदिक दार्शनिक विचारों के अनुसार असंगत है, क्योंकि यह प्रमेय की प्रकृति के विरुद्ध है।

🔹 आयत 2

आयत:
"और जब तारे झड़ पड़ेंगे।"

चयनित न्याय तत्व: प्रमाण (Pramana - सत्य ज्ञान का साधन)

न्याय दर्शन विश्लेषण:

प्रतिज्ञा:
तारों का झड़ना क़यामत के समय होगा।

हेतु:
यह कथन अनुभव, प्रत्यक्ष या अनुमान जैसे प्रमाणों पर आधारित नहीं है।

उदाहरण:
वैशेषिक दर्शन में ग्रह-नक्षत्र एक विशेष क्रमानुसार चलते हैं। उनका "झड़ना" केवल एक मिथकीय कल्पना है, न कि कोई भौतिक या द्रव्य संबंधी सत्य।

उपनय:
तारों का झड़ना किसी भी वैज्ञानिक या दार्शनिक प्रमाण से सिद्ध नहीं है। यह केवल भय उत्पन्न करने वाला वक्तव्य है।

निगमन:
यह आयत न्याय दर्शन के प्रमाण की कसौटी पर खरी नहीं उतरती है और तर्कहीन है।

🔹 आयत 3

आयत:
"और जब दरिया बह (कर एक-दूसरे से मिल) जाएँगे।"

चयनित न्याय तत्व: व्याप्ति (Vyapti - अनिवार्य संबंध)

न्याय दर्शन विश्लेषण:

प्रतिज्ञा:
दरिया आपस में मिल जाएँगे, यह एक क़यामती लक्षण है।

हेतु:
व्याप्ति का सिद्धांत कहता है कि कोई घटना तभी अनिवार्य मानी जा सकती है जब उसमें हेतु और साध्य का अकाट्य संबंध हो। यहाँ यह नहीं दर्शाया गया कि दरिया का मिलना किस कारण से "क़यामत" को सिद्ध करता है।

उदाहरण:
नदी संगम एक प्राकृतिक घटना है (जैसे प्रयाग में गंगा-यमुना का मिलना), जो विनाश का सूचक नहीं, बल्कि पुण्य स्थान है।

उपनय:
इसका वर्णन भय उत्पन्न करने की मनोवैज्ञानिक शैली है, न कि तर्कसंगत दृष्टिकोण।

निगमन:
यह आयत न्याय दर्शन की व्याप्ति नियम का उल्लंघन करती है और अतार्किक है।

⚱ आयत **4**

आयत:
"और जब कब्रें उखाड़ दी जाएँगी।"

चयनित न्याय तत्व: अनुमान (Anumana - तर्क)

न्याय दर्शन विश्लेषण:

प्रतिज्ञा:
क़यामत के समय मृत शरीर पुनर्जीवित होंगे।

हेतुः
यह तर्क कि "कब्रें उखाड़ दी जाएँगी" से जीवन की वापसी का संकेत मिलता है, अनुमान का दुरुपयोग है। न्याय दर्शन में पुनर्जन्म की अवधारणा आत्मा पर आधारित है, शरीर पर नहीं।

उदाहरणः
गीता अध्याय 2 श्लोक 22 में कहा गया है –
"वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।"
(आत्मा पुराने शरीर को छोड़कर नए को धारण करती है)

उपनयः
शरीर की खुदाई आत्मा की वापसी का प्रमाण नहीं है।

निगमनः
यह आयत आत्मा और शरीर के संबंध की वैदिक समझ को नकारती है और न्याय-दर्शन के अनुमान की कसौटी पर खोटी उतरती है।

 आयत **5**

आयतः
"तब हर शख़्स को मालूम हो जाएगा कि उसने आगे क्या भेजा था और पीछे क्या छोड़ा था।"

चयनित न्याय तत्वः उपमान (Upamana - उपमा)

न्याय दर्शन विश्लेषणः

प्रतिज्ञाः
मनुष्य अपने कर्मों के पूर्ण प्रभाव को मृत्यु के बाद समझेगा।

हेतुः
यह बात उपमा द्वारा समझाई गई है कि जैसे लेखा-जोखा सामने आ जाए, वैसे ही कर्मों की स्पष्टता हो जाएगी। परंतु यह उपमा उस समय लागू होती जब कर्म सिद्धांत न्याय के प्रमाणों द्वारा स्पष्ट होता।

उदाहरणः
मनुस्मृति कहती है –

"कर्मणा जायते जन्तुः कर्मणैव विनश्यति।"
(मनुष्य कर्म से जन्म लेता है और कर्म से ही पतन होता है)

उपनयः
इस आयत में कर्मफल का ज्ञान केवल मृत्यु के बाद बताया गया है, जबकि वैदिक और न्यायदृष्टि से यह जीवन में अनुभव किया जा सकता है।

निगमनः
यह आयत न्याय दर्शन की उपमान प्रणाली का अतार्किक विस्तार करती है।

 सारणी (तार्किक मूल्यांकन सारांश):

आयत संख्या	चुना गया तत्व	मुख्य आलोचना
1	प्रमेय	आकाश का फटना एक अनित्य तत्त्व पर आधारित है जो न्यायदर्शन के अनुसार संभव नहीं
2	प्रमाण	तारे गिरने का कोई प्रमाण नहीं, केवल भय आधारित कथन
3	व्याप्ति	दरिया का मिलना विनाश का लक्षण नहीं, व्याप्ति दोष
4	अनुमान	कब्र से उठना शरीर पर आधारित मिथक है, आत्मा का तर्क न्याय संगत नहीं
5	उपमान	कर्मज्ञान का ज्ञान मृत्यु बाद सीमित बताना तात्त्विक दोष है

 समग्र निष्कर्ष:

सूरए अल-इनफितार की प्रस्तुत आयतें न्याय दर्शन के प्रमेय, प्रमाण, अनुमान, व्याप्ति और उपमान तत्त्वों के अनुसार तात्त्विक रूप से तर्कहीन व अप्रमाणित हैं। इन कथनों में भय उत्पन्न करने का प्रयास अधिक है, और यह सार्वभौमिक मानवीय बौद्धिकता तथा न्याय दर्शन के वैदिक सिद्धांतों के अनुरूप नहीं हैं।

यदि आप आगे की आयतें भेजना चाहें, तो मैं विश्लेषण जारी रख सकता हूँ।

धन्यवाद। आप सूरए अल-इनफितार (आयत 6-10) की समीक्षा के लिए प्रस्तुत कर रहे हैं। अब हम इन पाँच आयतों की न्याय दर्शन के 16 तत्वों में से उपयुक्त तत्वों के आधार पर विश्लेषण करेंगे - तात्त्विक, तर्कशास्त्रीय और वैदिक दृष्टिकोण से। हर आयत का विश्लेषण पृथक रूप से निम्न संरचना में किया गया है:

 आयत **6**

"ऐ इन्सान! तू अपने परवरदिगार के बारे में किस चीज़ ने धोका दिया?"

न्याय तत्व: हेत्वाभास (Fallacy - भ्रमित कारण)

न्याय दर्शन विश्लेषण:

प्रतिज्ञा:
मनुष्य अपने ईश्वर के विषय में धोखा खा गया है।

हेतु:
यह आरोपित प्रश्न किसी प्रमाणिक कारण पर आधारित नहीं है। यह पूर्वग्रह की स्थापना है कि मनुष्य अवश्य धोखे में है।

उदाहरण:
न्याय दर्शन में हेत्वाभास तब होता है जब कारण में दोष हो, जैसे - "धुँआ है इसलिए आँधी आई" - यह हेत्वाभास है।

उपनय:
यह आयत यह नहीं दर्शाती कि किस आधार पर मनुष्य ने "परवरदिगार" के विषय में भ्रांति पाई। स्वयं "परवरदिगार" की परिभाषा भी स्पष्ट नहीं की गई।

निगमन:
यह प्रश्न हेत्वाभास की श्रेणी में आता है क्योंकि यह तर्क नहीं बल्कि पूर्वनिर्धारित आरोप है। यह न्यायशास्त्रीय विधि के विरुद्ध है।

 आयत **7**

"जिसने तुझे पैदा किया, तो तुझे दुरुस्त बनाया और मुनासिब आज़ा दिए।"

न्याय तत्व: प्रमाण (Pramana – सत्य ज्ञान का साधन)

न्याय दर्शन विश्लेषण:

प्रतिज्ञा:
ईश्वर ने मानव को रचा और उसे संपूर्ण बनाया।

हेतु:
यदि यह कहा जाता है कि कोई सर्वशक्तिमान सत्ता ने मनुष्य को उत्पन्न किया है, तो यह दार्शनिक दृष्टि से प्रमाण-आधारित नहीं है।

उदाहरण:
सांख्य दर्शन के अनुसार प्राकृति और पुरुष के संयोग से सृष्टि उत्पन्न होती है – न कि किसी एक ईश्वर की इच्छा से।

उपनय:
यदि सृष्टि में त्रुटियाँ, असमानताएँ, विकलांगता आदि हैं, तो "दुरुस्त और मुनासिब" रचना का दावा प्रमाणिक नहीं है।

निगमन:
यह आयत न्याय दर्शन के प्रमाण (प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द) से सिद्ध नहीं होती, अतः अतार्किक मानी जाती है।

□ आयत **8**

"और जिस सूरत में उसने चाहा, तेरे जोड़-बंद मिलाए।"

न्याय तत्व: ईश्वर का मनमाना कारण (Hetu-vikalpa)

न्याय दर्शन विश्लेषण:

प्रतिज्ञा:
ईश्वर ने जैसे चाहा वैसे मानव की संरचना की।

हेतुः
यदि संरचना "इच्छा" पर आधारित है, तो यह मनमाना कारण (arbitrary cause) है, जो न्याय दर्शन में ग्राह्य नहीं।

उदाहरणः
न्याय दर्शन में हेतु और कार्य का संबंध नियमबद्ध होता है – बिना नियम के कार्य उत्पन्न नहीं होता।

उपनयः
यदि ईश्वर जैसा चाहता है वैसा करता है, तो विकलांगता, रोग और मृत्यु को भी उसी इच्छा से जोड़ना होगा – जो नैतिक रूप से अन्यायपूर्ण होगा।

निगमनः
यह आयत न्याय दर्शन के नियत कारण-सिद्धांत का उल्लंघन करती है और मनमाने हेत्वाभास से ग्रस्त है।

□ □□□ 9

"हाँ! बात यह है कि तुम लोग 'जज़ा' (के दिन) को झुठलाते हो।"

न्याय तत्वः अनुमान (Anumana – तर्क)

न्याय दर्शन विश्लेषणः

प्रतिज्ञाः
मनुष्य 'जज़ा' यानी न्याय के दिन को नकारता है।

हेतुः
इस पर आरोप लगाया गया है, परंतु यह नहीं दिखाया गया कि किस तर्क से 'जज़ा' जैसी कोई वस्तु अस्तित्व में है।

उदाहरणः
न्याय दर्शन में अनुमान तभी ग्राह्य है जब उसका हेतु, दृष्टांत और व्याप्ति सुसंगत हो। यहाँ कोई व्याप्ति नहीं दी गई।

उपनयः
जैसे "धुएँ से आग का अनुमान होता है" - वैसे ही "जज़ा" का अनुमान किस प्रमाण से हो, वह नहीं बताया गया।

निगमनः
यह अनुमान दोषयुक्त है, क्योंकि बिना कारण या दृष्टांत के सिद्धांत स्थापित करना तर्क के विरुद्ध है।

आयत **10**

"हालाँकि तुम पर निगेहबान मुक़र्रर हैं।"

न्याय तत्वः अप्रमेय कल्पना (Aprameya Kalpana)

न्याय दर्शन विश्लेषणः

प्रतिज्ञाः
हर मनुष्य पर निगरानी रखने वाले नियुक्त हैं।

हेतुः
निगरानी करने वाले 'फरिश्ते' या शक्ति का कोई प्रत्यक्ष या अनुमेय प्रमाण नहीं दिया गया।

उदाहरणः
वैशेषिक दर्शन में केवल ज्ञेय वस्तुएँ (जो इन्द्रिय अथवा तर्क से जानी जाएँ) मान्य हैं। 'निगरानी शक्ति' जैसी अप्रमेय कल्पना उसमें स्थान नहीं रखती।

उपनयः
यदि यह निगरानीकर्ता आत्मा का भाग होता तो स्पष्ट होता, परन्तु यह बाहरी संस्था की कल्पना है।

निगमनः
यह आयत न्याय दर्शन की प्रमेय और प्रमाण की कसौटी पर तर्कहीन और काल्पनिक है।

तार्किक दोष सारणी :

आयत संख्या	चुना गया तत्व	मुख्य दोष/आलोचना

6	**हेत्वाभास**	**मनुष्य के धोखे में पड़ने का कोई प्रमाण या स्पष्ट कारण नहीं**
7	**प्रमाण**	**मानव सृष्टि का वर्णन प्रमाण-आधारित नहीं है**
8	**हेतुविकल्प**	**"जैसे चाहा" वाला कारण मनमाना और तर्कहीन है**
9	**अनुमान**	**'जज़ा' का अस्तित्व बिना प्रमाणित व्याप्ति के स्वीकारा गया**
10	**अप्रमेय कल्पना**	**निगरानीकर्ता का कोई प्रत्यक्ष या अनुमेय प्रमाण नहीं है**

समग्र निष्कर्ष **(Conclusion):**

सूरए अल-इनफितार की आयतें (6–10) न्याय दर्शन के प्रमेय, प्रमाण, हेत्वाभास, अनुमान और कल्पना की कसौटी पर तर्कहीन सिद्ध होती हैं। ये आयतें आत्मा और सृष्टि के विषय में स्पष्ट वैदिक तथा न्यायसंगत सिद्धांतों की उपेक्षा करती हैं, और अधिकतर भय तथा अधीनता की भावना उत्पन्न करती हैं, न कि विवेक व बौद्धिक प्रेरणा।

यदि आप आयत 11 से आगे भेजना चाहें, तो मैं अगला विश्लेषण प्रस्तुत कर सकता हूँ।

धन्यवाद। अब प्रस्तुत हैं सूरए अल-इनफितार की आयत 11 से 15 तक का विश्लेषण न्याय दर्शन के तत्वों की सहायता से, जिनमें प्रमाण, अनुमान, हेत्वाभास, व्याप्ति, अप्रमेय कल्पना आदि के आधार पर तात्त्विक तथा तार्किक समीक्षा की गई है।

आयत **11**

"बुज़ुर्ग लोग (फ़रिश्ते सब बातों को) लिखने वाले (केरामन क़ातेबीन)"

न्याय दर्शन तत्व: प्रमाण *(Pramana)* + अप्रमेय कल्पना

न्याय दर्शन विश्लेषण:

प्रत्यज्ञा (Proposition):
मनुष्य के सभी कर्मों को लिखने वाले फ़रिश्ते (Keraman Katibeen) नियुक्त हैं।

हेतु (Reason):
इन फ़रिश्तों का कोई प्रत्यक्ष, अनुमान या शब्द प्रमाण से समर्थन नहीं है। यह कल्पना अप्रमेय है।

उदाहरण (Example):
वैशेषिक और न्याय दर्शनों में केवल वही वस्तु स्वीकार्य होती है जो प्रत्यक्ष (इंद्रिय), अनुमान (तर्क) या आप्तवाक्य से सिद्ध हो। 'लिखने वाले फ़रिश्ते' इनमें से किसी से प्रमाणित नहीं।

उपनय (Application):
यदि फ़रिश्ते मनुष्य की गतिविधियाँ लिखते हैं, तो उनका कोई प्रमाणिक प्रभाव जगत में होना चाहिए, जो नहीं दिखता।

निगमन (Conclusion):
यह कल्पना न्याय दर्शन के तीनों प्रमाणों से परे है, अतः यह अप्रमेय कल्पना की श्रेणी में आती है और न्याय की कसौटी पर अस्वीकार्य है।

 आयत **12**

"जो कुछ तुम करते हो वह सब जानते हैं।"

 न्याय दर्शन तत्व: अनुमान *(Anumana)* + व्याप्ति *(Vyapti)*

न्याय दर्शन विश्लेषण:

प्रत्यज्ञा:
फ़रिश्ते मनुष्य के हर कर्म को जानते हैं।

हेतु:
जैसा कि पूर्व आयत में बताया गया, इन फ़रिश्तों का ज्ञान केवल अनुमान पर आधारित है, न कि किसी प्रत्यक्ष प्रमाण पर।

उदाहरण:
न्याय दर्शन में व्याप्ति (invariable concomitance) के बिना अनुमान अमान्य होता है। "धुआँ है तो आग है" – यह व्याप्ति है। पर यहाँ फ़रिश्ता है, तो ज्ञान है - ऐसा कोई प्रत्यक्ष व्याप्ति नहीं।

उपनयः
ज्ञान का होना प्रमाणों से ही जाना जा सकता है, परन्तु यहाँ यह आरोप है कि फ़रिश्ते हर कर्म जानते हैं - यह सर्वज्ञता का अतीन्द्रिय दावा है।

निगमनः
यह अनुमान बिना व्याप्ति के किया गया है, अतः यह भी तर्कदोषयुक्त है।

आयत **13**

"बेशक नेक-ओ-कार लोग (बेहिश्त की) नेअमतों में होंगे।"

** न्याय तत्वः प्रमेय *(Object of Knowledge) +* फल सिद्धांत**

न्याय दर्शन विश्लेषणः

प्रत्यज्ञाः
नेकी करने वाले लोग स्वर्ग की नेमतों में होंगे।

हेतुः
इसका कोई सार्वभौमिक प्रमेय या सिद्ध सिद्धांत नहीं है कि नेकी का फल सदा ही सुख (स्वर्ग) होगा।

उदाहरणः
भगवद्गीता (अ. 2, श्लोक 47) में कहा गया है - "कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।"- केवल कर्म पर अधिकार है, फल पर नहीं।

उपनयः
यदि फल सदा नेकी से ही मिलना तय होता तो संसार में अत्याचारियों को वैभव और सज्जनों को कष्ट न होता।

निगमनः
यह आयत फल की गारंटी देती है, जो न्याय दर्शन के "फल की अनिश्चितता" के सिद्धांत का खंडन करती है। अतः तात्त्विक दृष्टि से यह प्रमेय दोषयुक्त है।

आयत **14**

“और बदकार लोग यक़ीनन जहन्नुम में (जज़ा के दिन) होंगे।”

** न्याय तत्व: व्याप्ति + नैतिक प्रश्न**

न्याय दर्शन विश्लेषण:

प्रत्यज्ञा:
पापी लोग दण्डित होंगे और नर्क में डाल दिए जाएंगे।

हेतु:
इसमें कर्म और फल की एकरूप व्याप्ति को स्वीकार किया गया है, परन्तु यह न्याय दर्शन में स्थापित नहीं है कि हर अपराधी को एक ही किस्म की सज़ा मिले।

उदाहरण:
मनुस्मृति (अ. 8.317) के अनुसार दंड का उद्देश्य दंड नहीं बल्कि सुधार और समाज की रक्षा होता है।

उपनय:
यदि हर पाप का परिणाम नर्क है, तो दया, सुधार और पुनरुत्थान जैसे तत्वों की कोई जगह नहीं रह जाती।

निगमन:
यह न्याय-दृष्टि से अति-न्याय (Over-punishment) का सिद्धांत है जो नैतिक और तात्त्विक रूप से असंगत है।

 आयत **15**

“उसी में झोंके जाएंगे।”

** न्याय तत्व: न्याय प्रक्रिया की अनुपस्थिति *(Nyaya-Aprayog)***

न्याय दर्शन विश्लेषण:

प्रत्यज्ञा:
पापी लोग नर्क में फेंके जाएंगे।

हेतुः
कोई तटस्थ दंड प्रणाली नहीं दर्शाई गई है। न कोई प्रक्रिया, न सुनवाई, न कारण, न अपील - सीधे 'झोंकने' की बात है।

उदाहरणः
न्यायशास्त्र में न्याय देने की प्रक्रिया होती है - विचार, प्रमेय, साक्ष्य और निर्णय। बिना प्रक्रिया के दंड देना अन्याय है।

उपनयः
मनुस्मृति व न्याय दर्शन में न्याय के पूर्व साक्ष्य-विश्लेषण अनिवार्य होता है, जो यहाँ अनुपस्थित है।

निगमनः
यह आयत एक क्रूर अन्याय की संकल्पना प्रस्तुत करती है, जो कि न्याय दर्शन के सिद्धांतों के विरुद्ध है।

 तार्किक दोष सारणी **:**

आयत संख्या	**चुना गया न्याय तत्व**	**दोष या तर्क समस्या**
11	**प्रमाण + अप्रमेय कल्पना**	**फ़रिश्ते और लेखन की धारणा प्रमाण से परे कल्पना है**
12	**अनुमान + व्याप्ति**	**'फ़रिश्ते सब जानते हैं' का अनुमान तर्कहीन है**
13	**प्रमेय + फल सिद्धांत**	**नेकी का फल हमेशा सुख होगा - यह तर्कसिद्ध नहीं है**
14	**व्याप्ति + नैतिक दोष**	**हर अपराध का एक ही दंड - नैतिक रूप से असंगत**
15	**न्याय प्रक्रिया का अभाव**	**बिना न्याय प्रक्रिया के दंड - तात्त्विक रूप से अन्यायपूर्ण**

 न्याय दर्शन आधारित निष्कर्ष **:**

सूरए अल-इनफितार की आयत 11 से 15 में वर्णित फ़रिश्तों की निगरानी, स्वर्ग-नरक का वितरण और न्याय का स्वरूप, न्याय दर्शन की मूलभूत मान्यताओं - जैसे प्रमाण, तर्क, निष्पक्ष न्याय प्रक्रिया, सुधारात्मक दृष्टिकोण, आदि का उल्लंघन करते हैं।

ये आयतें व्यक्ति को भय के माध्यम से नियंत्रित करती हैं, जबकि न्याय दर्शन, योग दर्शन और भगवद्गीता जैसे भारतीय दर्शनों में आत्मा के सुधार और मुक्ति को प्रमुख उद्देश्य माना गया है – न कि हिंसात्मक दंड को।

यदि आप आगे की आयतें (16 से 19) भेजें, तो मैं अगली समीक्षा प्रस्तुत कर सकता हूँ।

आपने सूरए अल-इनफितार की अंतिम चार आयतें **(16–19)** प्रस्तुत की हैं। अब मैं इन आयतों की समीक्षा न्याय दर्शन **(Nyāya Darshan)** की शास्त्रीय पद्धति से करूंगा। प्रत्येक आयत का विश्लेषण नीचे **Pratijna → Hetu → Udaharana → Upanaya → Nigamana** के अनुसार किया गया है, और अंत में एक सारणी दी गई है।

🔹 आयत **16**

"और वह लोग उससे छुप न सकेंगे"

🔹 **न्याय दर्शन तत्वः व्याप्ति** ***(Invariable Concomitance) +*** **अनुमान** ***(Anumana)***

तात्त्विक समीक्षाः

प्रत्यज्ञा (Proposition):
जज़ा के दिन कोई भी व्यक्ति (पापी) अपने कर्मों से छुप नहीं सकेगा।

हेतु (Reason):
यह मान्यता इस धारणा पर आधारित है कि हर कर्म का लेखा स्वचालित रूप से संग्रहित है और कोई भी उससे बच नहीं सकता।

उदाहरणः
न्याय दर्शन में "व्याप्ति" (invariable relation) के आधार पर ही अनुमान मान्य होता है। यदि हर पाप का लेखा सुरक्षित है, तो उसके प्रमाण (जैसे – स्मृति, साक्षी, उपकरण आदि) भी स्पष्ट होने चाहिए, जो यहाँ स्पष्ट नहीं।

उपनयः
इस आयत में यह मान लिया गया है कि ईश्वर अथवा फ़रिश्तों के पास हर कर्म का अविकल विवरण है, जो न्यायशास्त्रीय दृष्टि से अनिश्चित अनुमान है।

निगमन:
यह कथन 'सर्वज्ञ सर्वदर्शी व्यवस्था' पर आधारित है, जिसे न न्याय दर्शन में प्रमाणित किया गया है, न वैशेषिक में। अतः यह अनिर्णीत अनुमान पर आधारित तर्क है।

□ आयत **17**

"और तुम्हें क्या मालूम कि जज़ा का दिन क्या है?"

□ **न्याय तत्व: प्रमेय *(Object of Knowledge) +* अप्रामेयता *(Non-knowability)***

तात्त्विक समीक्षा:

प्रत्यज्ञा:
मनुष्य को जज़ा (पुनःफल/दंड) के दिन की सच्चाई ज्ञात नहीं।

हेतु:
यह मान्यता यह संकेत देती है कि यह ज्ञान अनुभव या प्रमाण के बाहर है।

उदाहरण:
न्याय दर्शन में किसी वस्तु को 'प्रमेय' तभी माना जाता है जब वह प्रमाण *(Pratyaksha),* अनुमान *(Anumana),* शब्द *(Aptavakya)* से सिद्ध हो सके। यहाँ जज़ा का दिन प्रमाणों से परे बताया गया है।

उपनय:
यदि कोई ज्ञान अनुभव व तर्क से परे है, तो वह न्यायिक विमर्श का विषय ही नहीं बनता।

निगमन:
यह आयत स्वयं उस विषय को अप्रमेय (non-cognizable) घोषित कर रही है, इसलिए यह प्रमेय हीन विषय है – और न्यायशास्त्र में इसका कोई स्थान नहीं।

□ आयत **18**

"फिर तुम्हें क्या मालूम कि जज़ा का दिन क्या चीज़ है?"

□ **न्याय तत्वः अनुक्त प्रतिपादन *(Repeating Ambiguity)***

तात्त्विक समीक्षाः

प्रत्यज्ञाः

फिर वही बात दोहराई जाती है – तुम नहीं जानते कि जज़ा का दिन क्या है।

हेतुः

यह दोगुना दोहराव किसी ज्ञानवर्धक उद्देश्य से नहीं, बल्कि रहस्यात्मक भय पैदा करने के लिए है।

उदाहरणः

न्याय दर्शन में अनवस्थात्मक तर्क या बार-बार दोहराव को तार्किक दोष (hetvābhāsa) माना गया है। यह तर्क को पुष्ट नहीं करता।

उपनयः

जिन विषयों को तर्क द्वारा न स्पष्ट किया जाए, उन्हें केवल बार-बार दोहराना, "श्रद्धा" पर आधारित है, न्याय पर नहीं।

निगमनः

यह दोहराव तार्किक अनुशासन का उल्लंघन करता है और अन्धश्रद्धा प्रेरक शैली का संकेत है।

□ आयत **19**

"उस दिन कोई शख़्स किसी शख़्स की भलाई न कर सकेगा और उस दिन हुक्म सिर्फ ख़ुदा ही का होगा"

□ **न्याय तत्वः न्याय व्यवस्था का केंद्रीकरण *(Centralized Authority Fallacy) +* नैतिक विरोधाभास**

तात्त्विक समीक्षाः

प्रत्यज्ञाः

जज़ा के दिन कोई किसी की सहायता नहीं करेगा, और पूरा अधिकार केवल एक ही सत्ता (ईश्वर) का होगा।

हेतुः

यह कथन न केवल अन्यायपूर्ण है, बल्कि सामाजिक नैतिकता के विपरीत है, क्योंकि यह सहायता करने की मानवीय प्रवृत्ति को निषेध करता है।

उदाहरण:
भगवद गीता (18.66) में "सर्वधर्मान परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज" कहा गया है, पर वहाँ भी आत्मा को ईश्वर तक पहुँचाने की योग्यता दी गई है – एकांगी केंद्रीकरण नहीं।

उपनय:
यदि कोई भी किसी की मदद न कर सके, तो यह न्यायिक विखंडन और नैतिक विभाजन होगा, न कि न्याय।

निगमन:
यह आयत न्याय की उस संकल्पना को अस्वीकार करती है जिसमें "सहयोग, साक्ष्य, बचाव और सुधार" को स्थान मिलता है। यह पूर्ण अधिनायकवाद दर्शाता है, जो न्याय दर्शन के विरुद्ध है।

□ तार्किक दोष सारणी **(Ayat 16–19):**

आयत संख्या	न्याय तत्व	दोष का प्रकार
16	व्याप्ति + अनुमान	बिना प्रमाण के कर्म लेखा का दावा
17	प्रमेय + अप्रामेयता	विषय का अनुभव व प्रमाण से बाहर होना
18	अनुक्त प्रतिपादन	बार-बार भय उपजाने वाला तर्करहित दोहराव
19	केंद्रीकृत अन्याय	सहायता निषेध, केवल एक सत्ता का तानाशाही दावा

□ न्याय -दर्शन निष्कर्ष **(Ayat 16–19):**

सूरए अल-इनफितार की इन अंतिम आयतों में न्याय की संकल्पना को अत्यंत सीमित कर दिया गया है। यहाँ ज्ञान, तर्क, प्रमाण और नैतिकता के स्थान पर आतंक और अविवेकी समर्पण को आधार बनाया गया है। यह न्याय दर्शन के स्वतंत्र, प्रमेयात्मक और तात्त्विक न्याय के विरुद्ध है।

> **□ न्याय दर्शन कहता है: "युक्त्या सिद्धं तत् प्रमाणम्" – जो तर्क से सिद्ध हो वही प्रमाण है। जबकि इन आयतों में तर्क का स्थान अन्धविश्वास और भय ने ले लिया है।**

यदि आप चाहें तो अब अगली सूरा प्रस्तुत करें, मैं इसी प्रकार न्याय दर्शन के तत्वों से उसका तात्त्विक विश्लेषण कर दूंगा।